ISSN 0975-119X
Vol-11-Issue-6
November-December-2019

जैन ज्योतिषविद्या: एक परिचयात्मक अनुशीलन

डॉ. सत्यनारायण भारद्वाज

सहायक आचार्य, प्राकृत एवं संस्कृत विभाग, जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं।

शोध-सारांश

भारतीय संस्कृति अतिप्राचीन संस्कृति है। इसके प्रमुख स्तम्भों में यहां प्रचलित अनेक विद्याएं हैं, उनमें से ज्योतिषविद्या भी अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। भारतीय ज्योतिषविद्या पूर्णतः वैज्ञानिक एवं सर्वमान्य विद्या है। यह भारतीय ज्ञान का महत्त्वपूर्ण अंग मानी जाती है। एक ओर आचार्यों ने इसे पराविद्या की कोटी में ला दिया वही दूसरी ओर इसका प्रवेश सर्व-साधारण के जीवन में इस सीमा तक व्याप्त हो गया कि शुभ घड़ी, लग्न, मूहूर्त-शोधन दिनचर्या के अंग बन गये। इस विद्या के उत्तरोत्तर विकास के लिए जहां सभी वर्गों के विद्वानों ने अपनी भूमिका निभाई है वहीं जैनाचार्यों का भी प्रमुख योगदान रहा है। आगमों से लेकर वर्तमान युग तक अनेक आचार्यों ने ज्योतिषविद्या को पल्लवित और पुष्पपित किया है। जैनाचार्यों द्वारा प्रणीत ज्योतिष-ग्रन्थों के द्वारा अनेक नवीन तथ्यों का समावेश हुआ है। वहीं अनेक प्राचीन सिद्धान्तों का परिमार्जन भी हुआ है। इस शोधालेख के माध्यम से जैन ज्योतिषविद्या के परिचय के अन्तर्गत इस विद्या की प्राचीनता, नक्षत्रों का आकार-प्रकार, तिथियों के नाम एवं स्वामी, दिन-रात के मूहूर्त एवं पंचांग-निर्माण-विधि आदि बिन्दुओं पर ससंदर्भ चर्चा की जायेगी।

भूमिका

ज्योतिषविद्या भारतीय ज्ञान का महत्त्वपूर्ण अंग है। विशेषकर इसलिये कि एक ओर तो आचार्यों ने इसे पराविद्या की कोटि में ला दिया और दूसरी ओर इसका प्रवेश सर्वसाधारण के जीवन में इस सीमा तक व्याप्त हो गया कि शुभ घड़ी, लग्न और मुहूर्त-शोधन दैनन्दिन जीवन के अंग बन गये। पंचांग के तत्त्वों का ज्ञान चाहे सर्वसाधारण को न भी हो किन्तु ज्योतिषीयों द्वारा नियोजित अनेकों पंचांग उत्तर और दक्षिण में अपनी-अपनी पद्धति के अनुसार प्रचलित है। राशिफल का तो वैज्ञानिक कहे जाने वाले आज के युग में इतनी व्यापकता से प्रसार हो गया है कि अनेक बौद्धिक व्यक्ति भी पत्र-पत्रिकाओं के 'भविष्य-फल' वाले अंश को खुले तौर पर तो कुछ लोग प्रच्छन्न रूप से देख लेते हैं। विशिष्ट धातु-

Copyright©authors

ISSN 0975-119X
Vol-11-Issue-6
November-December-2019

निर्मित और नगीनों-जड़ी मुद्रिकाओं के प्रभाव को वे लोग भी कभी-कभी मानते देखे गये हैं, जो अन्तरिक्ष में उड़ान भरते हैं।

इस विद्या के उत्तरोत्तर विकास के लिए जहां सभी वर्गों के विद्वानों ने भूमिका का निर्वहन किया है। उनमें जैनाचार्यों का भी प्रमुख स्थान हैं। आगमों से लेकर परवर्तीकाल तक ऐसे अनेक जैन ज्योतिषचार्य हुये हैं, जिन्होंने ज्योतिषविद्या को एक सक्रिय गति प्रदान की है। परन्तु इन आचार्यों को केवल इतिहास के पन्नों तक ही सीमित रखा गया है, यह खेद का विषय है।

जैन-ज्योतिषविद्या

भारतीय विज्ञान की प्रत्येक शाखा की उन्नति में इतरधर्मावलम्बियों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर चलने वालों में जैनाचार्यों का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। अनेक लोकोपयोगी विषयों के निर्माण और अनुसन्धान द्वारा भारतीय विज्ञान के विकास में जैनाचार्यों ने अपनी लेखनी का कौशल दिखलाया है उनकी अमर लेखनी से प्रसूत दिव्य रचनाएं अद्यतन जैन विज्ञान की यशः पताका को फहरा रही है।

ज्योतिष शास्त्र का आलोड़न करने पर ज्ञात होता है कि जैनाचार्यों द्वारा निर्मित ज्योतिष ग्रन्थों से भारतीय ज्योतिष में अनेक नवीन तथ्यों का समावेश हुआ है। इनके द्वारा रचित ग्रंथों में एतद् विषयक सामग्री प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। जैनाचार्यों द्वारा निर्मित ज्योतिष ग्रन्थों से भारतीय ज्योतिष में अनेक नवीन तथ्यों का समावेश तथा प्राचीन सिद्धान्तों में परिमार्जन हुआ है। सम्भवतः जैन ज्योतिष ग्रन्थों की सहायता के बिना भारतीय ज्योतिष के विकासक्रम को समझना कठिन ही नहीं, असम्भव प्रतीत होता है। अद्यतन भारतीय ज्योतिष की विवादास्पद अनेक समस्याएं जैन-ज्योतिष के सहयोग से सुलझायी जा सकती है।

जैन मुनियों द्वारा शिक्षा के चैदह आवश्यक अंगों में सांख्यान (अंकगणित) एवं ज्योतिष को प्रमुख स्थान दिया है तथा 72 विज्ञानों एवं कलाओं में ज्योतिष को सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण माना गया है।[1]

परवर्ती जैन मुनियों द्वारा ज्योतिष पर स्वतंत्र ग्रंथों की रचना की गयी है पर विद्वानों का उतना ध्यान इस ओर आकृष्ट नहीं हो सका, जितना कि उनके आगमिक साहित्य की ओर। फलस्वरूप कुछ ग्रन्थ तो कालकवलित हो गये और कुछ बच पाये, तो वे भी विभिन्न ग्रन्थागारों में उपेक्षित पड़े हुए है। कुछ समय से विद्वानों की दृष्टि इन ग्रन्थों के अध्ययन और अन्वेषण की ओर गयी है, जिससे एतद् विषयक अनेक जानकारी प्रकाश में आ सकी है। जैन ज्योतिषाचार्यों द्वारा रचित ज्योतिष सम्बन्धी रचनाओं की क्रमबद्ध सूची का भी अत्यन्त अभाव है।

Copyright©authors

ISSN 0975-119X
Vol-11-Issue-6
November-December-2019

जैन ज्योतिष विद्या की प्राचीनता

जैन-ज्योतिष की प्राचीनता को नेमिचन्द्र शास्त्री ने अपने ग्रन्थ भारतीय ज्योतिष में अनेक सबल प्रमाण देते हुए सिद्ध किया है। उन्होंने बताया कि पंचवर्षात्मक युग का सर्वप्रथम उल्लेख जैन ग्रन्थों में ही उपलब्ध होता है।[2] काललोक प्रकाश, ज्योतिष्करण्डक और सूर्यप्रज्ञप्ति में जिस पंचवर्षात्मक युग का निरूपण किया है, वह वेदांग ज्योतिष के युग में भिन्न और प्राचीन है। यथा- तिलोयपण्णत्ती में युग का निरूपण करते हुए कहा है कि-

सावण बहुल पाडिव रुद्दमुहुत्ते सुहोदये रविणो।
अभिजिस्स पढमजोए जुगस्स आदीइमस्स पुढं।।[3]

अर्थात् श्रावण कृष्ण प्रतिपदा के दिन अभिजित नक्षत्र में पंचवर्षीय युग का आरम्भ होता है।

जैन ज्योतिष की प्राचीनता उसकी नक्षत्र गणना से भी सिद्ध हो जाती है। प्राचीनकाल में कृत्तिका से नक्षत्र गणना की जाती थी। पर विचार किया जाये तो अभिजित वाली नक्षत्र गणना कृत्तिका वाली नक्षत्र गणना से प्राचीन है। जैन ग्रन्थों मं अभिजित वाली नक्षत्र गणना विद्यमान है। कृत्तिका से नक्षत्र गणना का प्रयोग भी प्राचीन ज्योतिष ग्रंथों में मिलता है। तथा चान्द्र नक्षत्रों की अपेक्षा सावन नक्षत्रों का विधान अधिक है।[4]

जैन संवत्सर प्रणाली को देखने से प्रतीत होता है कि इसका प्रयोग प्राचीन भारत में ई.पू. दसवीं शती से भी पहले था। वेदों में जो संवत्सर के नाम आये हैं।[5] जैन ग्रंथों में उनसे भिन्न नाम है। यह संवत्सर की प्रणाली अभिजित नक्षत्र पर आश्रित है।[6]

जैन ज्योतिष की प्राचीनता के अनेक पुष्ट प्रमाण हमें उपलब्ध होते हैं। ईस्वीं सन् से 500 वर्ष पूर्व में रचे गये प्राचीन जैन आगम में ज्योतिषी के लिए 'जोइसंगविउ'[7] शब्द आया है। भाष्यकारों ने इस शब्द का अर्थ ग्रह, नक्षत्र, प्रकीर्णक और ताराओं के विभिन्न विषयक ज्ञान के साथ और ग्रहों की सम्यक् स्थिति के ज्ञान को प्राप्त करना किया है। प्रश्नव्याकरणसूत्र में बताया गया है कि-

"तिरियवासी पंचविहा जोइसीया देवा, वहस्सती, चंद, सूर, सुक्क, सणिच्छरा, राहु, धुमकेउ, बुद्धा य, अंगारगा य, तत्ततणिज्ज कणगवणा जेयगहा जोइसियम्मि चारं चरंति, केतु य गतिरतीया। अट्ठावीसतिविहाय णक्खतरेवगणा णाणासंट्ठाणसंठियाओ य तारगाओ ठियलेस्साचारिणो य।"[8]

स्पष्ट है कि नवग्रहों का प्रयोग ग्रहों के रूप में ई. पू. तीसरी शती से भी पहले जैन-परम्परा में प्रचलित था। 'ज्योतिष्करण्डक' का रचना काल ई.पू. तीसरी या चैथी शती माना गया है। उसमें लग्न का जो निरूपण है, उससे भारतीय ज्योतिष की नवीन बातों पर प्रकाश पड़ता है।

Copyright©authors

ISSN 0975-119X
Vol-11-Issue-6
November-December-2019

लग्गं च दक्खिणायविसुवेसुवि अस्स उत्तरं अयणे।
लग्गं साई विसुवेसु पंचसु वि दक्खिणे अयणे।।[9]

इस पद्य में 'अस्स अर्थात् अश्विनी और 'साई अर्थात् स्वाति ये विषुव के लग्न बताये गये हैं। 'ज्योतिष्करण्डक' में विशिष्ट अवस्था के नक्षत्रों को भी लग्न कहा गया है। यवनों के आगमन से पूर्व भारत में यही जैन लग्न प्रणाली प्रचलित थी। 'वेदांग-ज्योतिष' में भी इस लग्न प्रणाली का आभास मिलता है-

श्रविष्ठाभ्यां गुणाभ्यस्तान् प्राग्विलग्नान् विनिर्दिशेत्।[10]

वेदांग ज्योतिष में पंचवर्षीय युग से उत्तरायण और दक्षिणायन के तिथि, नक्षत्र एवं दिनमान आदि का संधान किया गया है। इसके अनुसार युग का आरम्भ माघ शुक्ल प्रतिपदा के दिन सूर्य और चन्द्रमा के धनिष्ठा नक्षत्र सहित क्रांतिवृत्त में पहुंचने पर माना है-

स्वराक्रमेते सोगार्कौ यदा साकं सवासवौ।
स्यात्तदादियुगं माघस्तपश्शुक्लोऽयनं ह्युदक्।।
प्रपद्येते श्रविष्ठादौ सूर्या चन्द्रमसावुद्क।
सार्पार्धे दक्षिणार्कस्तु माघश्रावणयोस्सदा।।[11]

अर्थात् जब चन्द्रमा और सूर्य एकत्र वासव (धनिष्ठा) नक्षत्र में प्राप्त होकर आकाश में आक्रमण करते हैं उस समय युग, माघ (मास), तपस् (ऋतु), शुक्ल (पक्ष) और उदगयन का आरमभ होता है। श्रविष्ठा के आरम्भ में सूर्य और चन्द्रमा उत्तर की ओर मुड़ते है और आश्लेषा के आधे पर दक्षिण की ओर। सूर्य सर्वदा माघ और श्रावण मास में क्रमशः उत्तर और दक्षिण की ओर परावर्तित होता है।

प्राचीन ग्रन्थ षट्खण्डागम में प्राप्त ज्योतिष-चर्चा से इस बात की पुष्टि हो जाती है कि ''श्रावण कृष्ण प्रतिपदा के दिन सूर्य जिस समय अभिजित नक्षत्र पर पहुंचता है, उसी समय पंचवर्षीय युग प्रारम्भ होता है।[12]

जैन-ज्योतिषविद्या के अनुसार नक्षत्रों का आकार-प्रकार

नक्षत्रों के सम्बन्ध में जितनी उहापोह जैन विद्वानों ने की है, उतनी अन्यों ने नहीं। नक्षत्रों के आकार सम्बन्धी उल्लेख जैन-ज्योतिष की अलग विशेषता है। चन्द्रप्रज्ञप्ति[13] में नक्षत्रों के आकार-प्रकार, भोजन-वसन आदि का वर्णन करते हुए बताया गया है कि अभिजित नक्षत्र का आकार गोशृंग, श्रवण का कपाट, धनिष्ठा का पक्षी का पिंजरा, शतभिषा नक्षत्र का आकार पुष्प की राशि के समान पूर्वभाद्रपद एवं

Copyright©authors

ISSN 0975-119X
Vol-11-Issue-6
November-December-2019

उत्तराभाद्रपद अर्धबावड़ी, रेवती नक्षत्र कटे हुए अर्थ फल, अश्विनी नक्षत्र अश्वस्कन्ध, भरणी नक्षत्र स्त्री की योनि, कृत्तिका नक्षत्र का ग्राह, रोहिणी नक्षत्र का शकट, मृगशिरा नक्षत्र का मृगमस्तक, आद्र्रा नक्षत्र का रुधिर बिन्दु, पुनर्वसु नक्षत्र का चूलिका, पुष्प नक्षत्र का बढते हुए चन्द्र, आश्लेषा नक्षत्र ध्वजा, मघा नक्षत्र प्राकार पूर्वाफाल्गुनी एवं उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र का अर्ध-पल्यक, हस्त नक्षत्र का हथेली, चित्रा नक्षत्र का महुआ के पुष्प, स्वाति नक्षत्र का खीले, विशाखा नक्षत्र का दामिनी, अनुराधा नक्षत्र एकावली, ज्येष्ठा नक्षत्र गजदन्त, मूल नक्षत्र बिच्छू, पूर्वाषाढा नक्षत्र हस्ती की चाल और उत्तराषाढा नक्षत्र का सिंह आकार का होता है।

ऐसा माना जाता है कि यह नक्षत्रों की संस्थान सम्बन्धी प्रक्रिया वराहमिहिर के काल से पूर्व की है। इनके पूर्व कही भी नक्षत्रों के आकार की प्रक्रिया का उल्लेख नहीं है।

तिथियों के नाम एवं स्वामी

तिथियों की संज्ञा भी सूत्र रूप में धवला[14] में इस प्रकार आयी है- नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता और पूर्णा। ये पांच संज्ञाएं पन्द्रह तिथियों की निश्चित की गयी है। इनके स्वामी क्रम से चन्द्र, सूर्य, इन्द्र, आकाश और धर्म बताये गये हैं। पितामह सिद्धान्त, पौलिश सिद्धान्त और नारदीय सिद्धान्त में इन्हीं तिथियों का उल्लेख स्वामियों सहित मिलता है। पर स्वामियों की नामावली जैन नामावली से सर्वथा भिन्न है।[15] इसी प्रकार सूर्य नक्षत्र चान्द्र नक्षत्र, बार्हस्पत्य नक्षत्र एवं शुक्र नक्षत्र का उल्लेख भी जैनाचार्यों ने विलक्षण सूक्ष्म दृष्टि और गणितीय प्रतिभा से किया है।

दिन-रात के मुहूर्त

षट्खण्डागम की धवला टीका के प्रथम खण्ड गत चतुर्थांश[16] में प्राचीन जैन-ज्योतिष की कई महत्त्वपूर्ण बातें सूत्र रूप में विद्यमान है। उसमें समय के शुभाशुभ का ज्ञान कराने के लिए दिन-रात्रि के 15-15 मुहूर्त बताये गये हैं, उनमें से दिन के मुहूर्त इस प्रकार हैं- 1. रौद्र 2. श्वेत 3. भैग 4. सारभट 5. दैत्य 6. वैरोचन 7. वैश्वदेव 8. अभिजित 9. रोहण 10. बल 11. विजय 12. नैर्ऋत्य 13. वरूण 14. अर्यमन् 15. भाग्य इन दिन के मुहूर्तों में फलित जैन ग्रंथों के अनुसार रौद्र, सारभट, वैश्वदेव, दैत्य और भाग्य यात्रादि शुभ कार्यों में त्याज्य है। अभिजित और विजय ये दो मुहूर्त सभी कार्यों में सिद्धिदायक बताये गये हैं। आठवीं शती के जैन ज्योतिष सम्बन्धी मुहूर्त-ग्रन्थों में इन्ही मुहूर्तों को अधिक पल्लवित करकके प्रत्येक दिन के शुभाशुभ कृत्यों का प्रहरों में निरूपण किया है। इसी प्रकार रात्रि के भी 1. सावित्र 2. धुर्य 3. दात्रक 4. यम 5. वायु 6. हुताशन 7. भानु 8. वैजयन्त 9. सिद्धार्थ 10. सिद्धसेन 11. विक्षोभ 12. योग्य 13. पुष्पदन्त 14. सुगंधर्व और 15. अरूण ये पन्द्रह मुहूर्त है।

Copyright©authors

ISSN 0975-119X
Vol-11-Issue-6
November-December-2019

इनमें सिद्धार्थ, सिद्धसेन, दात्रक और पुष्पदन्त शुभ होते हैं, शेष अशुभ। सिद्धार्थ को सर्वकार्यों को सिद्ध करने वाला कहा गया है। ज्योतिषशास्त्र में इस प्रक्रिया का विकास आर्यभट्ट के बाद निर्मित फलित ग्रन्थों में ही मिलता है।

पचांग-निर्माण-विधि

पंचांग-निर्माण में भी जैनाचार्यों ने अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किया है। जैन पंचांग की प्रणाली अति प्राचीन हैं जिस समय भारतवर्ष में ज्योतिष के गणित ग्रन्थों का अधिक प्रचार-प्रसार नहीं हुआ था, उस समय जैन पंचांग-निर्माण सम्बन्धी विधियां पुष्पित और पल्लवित हो चुकी थी। प्राचीनकाल में गगनखण्डात्मक ग्रहों की गति लेकर पंचांग प्रणाली शुरू हुई थी, पर उत्तरवर्ती आचार्यों ने इस प्रणाली को स्थूल समझकर सुधार किया। तिथि, वार, नक्षत्र, योग और करण इन पांचों का नाम ही पंचाग है। जैन पंचाग में मेरू को केन्द्र मानकर ग्रहों का गमन होने की विशेषता है। पंचांग गणित में जैनाचार्यों ने देशान्तर, कालान्तर एवं अक्षांश सम्बन्धी संस्कार करके ग्रहानयन की अत्यन्त सूक्ष्म विधि बतलायी है। महेन्द्रगुरुकृत यन्त्रराज में ज्योतिष गणित सम्बन्धी समस्त सूत्र उल्लिखित है।

फलित ज्योतिष के अन्तर्गत भी जैन-ज्योतिष्ज्ञ के वैशिष्ट्य को नकारा नहीं जा सकता। ऐसे अनेक मौलिक एवं सारभूत ज्योतिषीय सिद्धान्तों में जैनाचार्यों ने अभिभूत किया है, जिससे ज्योतिष-वाङ्मय को सहज गति प्राप्त हो सकी है।

निष्कर्ष

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि अत्यन्त प्राचीनकाल से ही जैनाचार्यों का ध्यान ज्योतिष के विकास की ओर केन्द्रित रहा है। जैन आगमिक साहित्य में तो यत्र-तत्र न्यूनाधिक रूप से ज्योतिष सम्बन्धी सिद्धान्त सन्निहित है ही, तीसरी-चैथी शताब्दी में तद्विषयक स्वतंत्र ग्रंथ भी लिखे जाने की परम्परा प्रारमभ हो गयी, जो अनवरत रूप से जैन विद्वानों द्वारा पल्लवित एवं पुष्पित होती रही। ज्योतिषशास्त्र की विभिन्न शाखाओं यथा प्रश्नशास्त्र, शकुनशास्त्र, मुहूर्त एवं संहिता विषयक सम्बनधी अनेक ग्रन्थों का सृजन हुआ। इस प्रकार जैनाचार्यों द्वारा एतद् विषयक विपुल महत्त्वपूर्ण साहित्य का सृजन हुआ, जिसका अध्ययन भारतीय प्राचीन ज्योतिष के विकास को समझने के लिये अत्यन्त आवश्यक है। लेकिन खेद का विषय है कि उपलब्ध सामग्री का बहुभाग आज भी अप्रकाशित एवं उपेक्षित है। इस बीच कुछ विद्वानों का ध्यान ऐसे ग्रंथों के अध्ययन की ओर आकृष्ट हुआ है, तथापि इस दिशा में विशेष रूप से अन्वेषण करने की आवश्यकता है। विद्वानों की ऐसी मान्यता है कि इन ग्रंथों की पांडुलिपियां राजस्थान के जैन ग्रंथागारों में तथा अनेक राज्यों के ग्रन्थागारों में अध्येताओं एवं

Copyright©authors

ISSN 0975-119X
Vol-11-Issue-6
November-December-2019

शोधकत्र्ताओं की बाट जोह रही हैं। यदि उन ग्रंथो की खोज की जाय तथा उसका अध्ययन-मनन किया जाय तो यह एक महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक कार्य सिद्ध होगा, जिससे इस दिशा में जैनाचार्यों की योग्यता एवं उनके वैशिष्ट्य का सही आकलन किया जा सकेगा।

संदर्भ-सूची

1. समवायांग टीका, 14, पृ. 25.
2. वर्णी अभिनन्द ग्रन्थ, भारतीय ज्योतिष का पोषक जैन ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ. 470.
3. तिलोयपण्णत्ति, 1/70.
4. वर्णी अभिनन्द ग्रन्थ, भारतीय ज्योतिष का पोषक जैन ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ. 473.
5. यजुर्वेद, 27/45.
6. जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति, 7/184.
7. भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ. 48.
8. प्रश्नव्याकरणसूत्र, परिग्रह नामक पंचमसूत्र से पृ. 120.
9. ज्योतिष्करण्डक, उद्धृत भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ. 75.
10. ऋक् ज्योतिष, 19, भारतीय ज्योतिष, शंकर बालकृष्ण, पृ. 113.
11. ऋक् ज्योतिष, 5-6, भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ. 68.
12. वर्णी अभिनन्द ग्रन्थ, भारतीय ज्योतिष का पोषक जैन ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ. 470.
13. चन्द्रप्रज्ञप्ति, पृ. 204-210.
14. षट्खण्डागम, धवला टीका खण्ड-1, चतुर्थ भाग, पृ. 318-19.
15. वर्णी अभिनन्द ग्रन्थ, भारतीय ज्योतिष का पोषक जैन ज्योतिष, नेमिचन्द्र शास्त्री, पृ. 474.
16. धवला टीका, चतुर्थ भाग, पृ. 319.

Copyright©authors